Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2019 GISRRJ | Volume 2 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

गणपति सम्भवम् महाकाव्य का समीक्षात्मक अध्ययन

बिन्दू साहू
शोधच्छात्रा, (जे.आर.एफ) संस्कृत विभाग
नेहरू ग्राम भारती मानित विश्वविद्यालय
कोटवां जमुनीपुर दुबावल प्रयागराज

शोध आलेख सार – कवि प्रभुदत्त शास्त्री द्वारा रचित 'गणपति सम्भवम्' महाकाव्य भक्तिपरक है । यह ग्रंथ गणपति देव के शासन तंत्र की शिक्षा देता है, यही कारण है कि इसका प्रकाशन कवि ने गणतंत्र दिवस पर किया । गणपति सम्भवम् पुराण आदि ग्रंथों में आंशिक रूप से समुपलब्ध गणेश की कथा का कवि ने स्व कल्पना द्वारा परिवर्धन व परिवर्तन कर एक नवीन रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है । यह महाकाव्य दस सर्गों में निबद्ध है । किन्तु दशम् सर्ग में कवि वंश का परिचय है । इसमें देव गणेश जी की शैशवावस्था से गणपतित्व पद की प्राप्ति तक की कथा सन्निहित है । पद-पद में वर्तमान राष्ट्रीय चेतना समुद्भावित है । वस्तु, नेता, रस का युगानुरूप वर्णन कवि की काव्यशास्त्रीय प्रतिभा को व्यक्त करती है । इस महाकाव्य का वस्तु विन्यास काव्यशास्त्र रीति से महाकव्योचित है । काव्यात्मभूत ध्वनि-रस-रीति-गुण-अलंकार-बिम्ब विधान आदि की उत्तम योजना महाकाव्य के नामकरण से अंतिम पद्य तक दिखायी देती है।

मुख्य शब्द – प्रभुदत्त शास्त्री, गणपति सम्भवम्, महाकाव्य, ध्वनि, रस, रीति, गुण, अलंकार, बिम्ब विधान।

महाकाव्यों का उद्भव ऋग्वेद के आख्यानों से हुआ है । हमारा अभीष्ट यद्यपि संस्कृत के महाकाव्यों की जानकारी करने तक ही सीमित है, तथापि आनुवांशिक रूप में हमें संस्कृत-भाषा की आदि परिस्थितियों का यहाँ तक विश्व के महाकाव्यों का मूल प्रवृत्तियों का अध्ययन भी अपनी इस अभीष्ट पूर्ति के लिए कसा होगा । संस्कृत में महाकाव्यों और संसार के इतिहास में महाकाव्यों की पहली श्रेणी हमें मोटे-मोटे ग्रन्थों के रूप में उपलब्ध न होकर, मनुष्य की मौखिक भावनाओं के रूप में मिलती है जिनकी परम्परा सहस्त्रों वर्ष से अलिखित रूप में चली आ रही थी । मनुष्य के संस्कृत विचार ही, उसकी विकासशील काव्य प्रतिभा के पहले लक्ष्य-बिन्दु है ।

रामायण महाभारत इलियड और ओडेसी आदि ग्रन्थ यद्यपि आज प्रथम महाकाव्य कहे जाते हैं; किन्तु महाकाव्य का जो स्वरूप आज है उसके मापदण्ड के अनुसार क्यों इनको महाकाव्य कहाँ जा सकता है । बल्कि उक्त ग्रन्थकारों का कदापि यह उद्देश्य नहीं था कि भविष्य में उनकी इन कृतियों को महाकाव्य कहाँ जायेगा जैसा कि आज भी उनको केवल महाकाव्य कहकर उन पर न्याय नहीं किया जा सकता ।

इसलिए निष्कर्ष यह है कि महाकाव्यों का रचना या उनका स्वरूप युगीन परिस्थितियों के क्रम में एक जैसा नहीं रहा है और अन्तिम रूप में यह नहीं कहा जा सकता है कि आज महाकाव्य .या साहित्य के दूसरे काव्य–नाटक आदि अंगों के लिए जो परिभाषाएँ एवं मान्यताएँ स्थिर हो गयी हैं, भविष्य में उन्ही को स्वीकार किया जायेगा ।

रामायण और महाभारत भी इसीलिए प्रथम महाकाव्य नहीं है उन्हें हम एक युगविशेष का प्रतिनिधि महाकाव्य अवश्य कह सकते हैं । इन दोनों ग्रन्थों में हम दूसरी अनेक बातों में साथ–साथ अद्भुत वीर–भावना का वर्णन विशेष रूप से पाते हैं, इसलिए यदि हम यह कहे कि ये दोनों ग्रन्थ भारत के वृद्ध इतिहास के प्राचीनतम् किसी वीर–युग के प्रतिनिधि महाकाव्य है तो उनकी वास्तविकताओं को समझने में आसानी रहेगी ।

वाल्मीकि, व्यास होमर और बर्जिल ने अपने इन ग्रन्थों के लिए प्राचीनकाल से मौखिक रूप रूप से चले आ रहे अनेक आख्यानों और उपाख्यानों का दाय समेटकर उनको समृद्ध एवं क्रमबद्ध किया । इन ग्रन्थों के लिए प्राचीनकाल से मौखिक रूप से उनकी प्रधान विषयवस्तु, उनके निर्माण से पहले की है । वे पूर्वागत कथाएं रामायण आदि ग्रन्थों अपनी सिद्धावस्था को प्राप्त हो गयी ।

बहुत पुराने समय में सामूहिक नृत्य–गीतों द्वारा मनुष्य अपने जिन धार्मिक उत्सवों का आयोजन करता था अपने सुदीर्घ परम्परा में वे गीत–नृत्य एक आख्यान के रूप में स्मरण किये जाने लगे । ये आख्यान–गीत ही ऋग्वेद के संवाद–सूक्त है । ऐसे संवाद–सूक्त ऋग्वेद में अनेक हैं, जैसे यम – यमी (10/11) पुरुखा–उर्वशी(10/15) अगस्त्य–लोपामुद्रा (1/379) इन्द्र–इन्द्राणी(10/86) सरमा–पाणि(10/51/13) आदि वेद भाव्यकर यास्क ने इन संवाद–सूक्तों को आख्यान की संज्ञा दी है । 'रामायण' और महाभारत की शैलियों के ओर उनके द्वारा अनुप्राणित–काव्य–परम्परा को देखते हुए सहज ही कहा जा सकता है कि 'महाभारत' की अपेक्षा रामायण में काव्योत्कर्षक कारक गुण तथा अन्वित अधिक है । इसलिए महाभारत मुख्यत: इतिहास और गौणत: महाकाव्य है; किन्तु इसके विपरीत 'रामायण' मुख्यत: महाकाव्य और गौणत: इतिहास है । अपनी इसी प्रधान भावना के कारण महाभारत ने पुराणशैली को जन्म दिया और स्वयं भी पुराणों की शैली में चला गया किन्तु रामायण का विकास अलंकृत शैली के रूप में हुआ । रामायण को निश्चित अब से महाकाव्यों की श्रेणी में रख सकते हैं । और उसको अलंकृत शैली के उत्तरवर्ती काव्यों का जनक थी कह सकते हैं । रामायण से रूप–शिला और महाभारत से विषयवस्तु लेकर महाकाव्यों की परम्परा गे बढ़ी । अश्वघोष भारवि कालिदास माघ और श्रीहर्ष के महाकाव्यों में शिल्पविधान सम्बन्धी तत्व अलंकार–योजना, रूपकों, उपमाओं का आधिक्य और प्रकृति चित्रण सभी का आधार रामायण ही है ।

महाकाव्य की महत्ता मात्र आकार जन्य न होकर तत्गति गुणजन्य मानी जाती है । कोई भी विशालकाय ग्रन्थ अथवा रचना केवल आकार के आधार पर महाकाव्य नहीं कही जा सकती है अपितु उसके लिए कतिपय लक्षणों का होना जरूरी है संस्कृत–साहित्य शास्त्रों में विभिन्न काव्यशास्त्रियों ने महाकाव्य के स्वरूप की व्याख्या की । भामह ने भामहालंकार (ये दण्डी ने काव्यादर्श में, अग्नि पुराण में और विश्वनाथ ने साहित्यदर्पण में महाकाव्य के लक्षणों का विस्तारपूर्वक वर्णन किया । साहित्य दर्पण में प्राप्त महाकाव्य का लक्षण सर्वांगीण और व्यापक है–

"सर्गबन्धों महाकाव्य तत्रैको नायक: सुर: ।

सद्वंश: क्षत्रियों वापि धीरोदात्तगुणान्वित: ।।

एकवंश प्रभवा भूपा: कुल्जा वहवोऽपि वा ।

श्रृंङ्गारवीरशान्तानामेकोङ्गी रस इष्यते ।।

अङ्गानि सर्वेऽपि रसा: सर्वे नाटकसन्धय: ओ।

इतिहासोद्भवं वृत्तमन्यद्वा सज्जनाश्रयम् ।।

चत्वारस्तस्य वर्गा स्युस्तेष्वकं च फलं भवेत् ।

आदौ नमस्क्रियार्शीवा वस्तुनिर्देश एव वा ।।"

आधुनिक महाकाव्य 'गणपति सम्भवम्' उपर्युक्त सभी गुणों से परिपूर्ण हैं एवं आदर्शवादी, भक्तिमय महाकव्य हैं। आधुनिक महाकाव्यकारों ने प्राचीन साहित्य महाकाव्यों से पर्याप्त प्रेरणा ग्रहण की है किन्तु अपने नवोन्मेष का अन्धानुगामी नहीं रखा । प्रभुदत्त शास्त्री के 'गणपति सम्भवम्' महाकाव्य में परम्परा के प्रति श्रद्धा और आधुनिकता के प्रति आकर्षण दोनों का मधुरिम संगम दिखाई देता है । इसमें शारीरिक चेतना की सामाजिक और राजनीतिक चेतना का महत्व दिया गया है। इसमें राष्ट्रभक्ति का पदे–पदे दर्शन होता है ।

स्वातंत्र्योत्तर पौराणिक महाकाव्य रूप में सीचाचरितम्, गणपतिसम्भवम्, श्रीकृष्ण चरितामृतम्, शिवकथामृतं , श्रीकृष्णचरितम्, विन्ध्यवासिनी विजयम्, शम्भुबध महाकाव्य और भागीरथी दर्शनम् आदि के द्वारा मानव को सर्वाधिक सरल, सुगम भावना की गहराइयों का स्पर्श कराया है तथा वर्तमान युग में समाप्त होती हुई प्रभु के प्रति आस्था, विश्वास को जीवन्तता प्रदान करते हुए उसे सुदृढ़ बनाया है साथ ही मर्यादित सच्चरित्रों के माध्यम से समाज में मानवीय मूल्यों का स्थापना किया है । ईश्वर के नाम पर हो रहे धार्मिक उन्माद, साम्प्रायिक संघर्ष, वर्गभेद और वर्णभेद को मिटाने का भरसक प्रयास किया है । और प्राचीनकाल से सतत रूप में प्रवाहित भक्ति भावना का नैस्तर्य बनाये रखा है ।

संस्कृत जगत का यह परम सौभाग्य है कि इसमें ऐसे महाकाव्य लिखने वाले विद्वान मौजूद हैं जो संस्कृत–साहित्य को नवजीवन प्रदान कर रहे हैं . विदेशियों के आक्रमणों से पहले स प्रकार के महाकाव्य लिखे जाते थे, कवि कुलगुरुकालिदास के 'कुमारसम्भवम्' की परम्परा में लिखा हुआ शायद ही कोई महाकाव्य किसी की परम्परा में देखने को आया हो । वस्तुत: 'कुमारसम्भवम्' महाकाव्य ही गणपति सम्भवम् की निर्माण की उत्कण्ठा सा कर रहा था । कुमार जैसा भाई पाकर गणेश की कीर्ति करने वाले कीर्ति को पाकर ही प्रसन्न रह सकता है जो यह यश इस शोध – अध्ययन के द्वारा सम्भव किया जा सका ।

गणपति देव की उत्पत्ति का ज्ञान कराने वाला महाकाव्य 'गणपति सम्भवम्' के प्रणेता आचार्य प्रभुदत्त शास्त्री जी प्रकाण्ड विद्वान थे । उनका जन्म सन् 1892 में फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी तिथि गुरुवार के दिन राजस्थान की अलवर नामक नगरी की पश्चिम दिशा में स्थित ततारपुर में हुआ । यह स्थल राजाओं के वीरगाथाओं का स्मरण दिलाने वाला एवं विविध मन्दिरों से सुशोभित है । ततारपुर के पश्चिम की ओर मिश्र नामक वंश है जो विद्या, तप, कृपा आदि गुणों से शोभायमान है । उसी मिश्र वंश में प्रभुदत्त शास्त्री जी के प्रपितामह सत्पुरुष, विद्वता में अग्रणी श्री शालिग्राम मिश्र हुए, जिन्होंने टीका सहित भागवतादि ग्रंथों तथा वाल्मीकिय रामायण का प्रणयन किया । श्री प्रभुदत्त शास्त्री के पितामह श्री रामप्रताप जी भगवान राम के परम भक्त और वैद्य भी थे । श्री रामप्रताप जी के पुत्र श्री रामशरण थे, जो कवि प्रभुदत्त शास्त्री जी के पिता थे । प्रभुदत्त शास्त्री जब दो वर्ष के थे, तभी उनके पिता का देहान्त हो गया था । उनकी माता ने उनका पालन–पोषण किया । उन्होंने विद्यार्जन मारवाड़ के मध्य स्थित मण्डावा नामक नगर में किया । वहाँ तपमूर्ति स्वरूप श्री पं. विलासराय शुक्ल एवं उनके भाई मोहनलाल जी प्रभुदत्त शास्त्री के गुरु थे, जिनसे उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त की । इसके अतिरिक्त 'सूर्यानन्द' नामक विद्वान से भी उन्होंने विविध विषयों की शिक्षा ग्रहण की । तत्पश्चात् दिल्ली आकर अनेक वर्षों तक अध्यापन कार्य कर धन, मान, यश प्राप्त किया ।

कवि की विद्वता वहाँ परिलक्षित होती है, जब उन्होने विद्वत मण्डली में आयोजित विविध प्रतियोगिता में अपनी विद्वता का परिचय देकर सर्वोच्च पदवी प्राप्त की ।

एक बार धर्मक्षेत्र नाम से विख्यात् महाराजा कुरू के क्षेत्र में गीतार्थों की प्रतियोगिता हुई, जिसमें बहुत से विद्वान आमन्त्रित थे । पटियाला के प्रधानमंत्री श्री द्यालीराम ने प्रश्न किया– भगवान श्रीकृष्ण अंत में कहते हैं "सर्वान् धर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं ब्रज" अर्थात् सब धर्मों को छोड़कर मेरी शरण में आओ, तो फिर युद्ध रूप धर्म को छोड़ते हुए अर्जुन को क्यों तैयार किया, यह आगे पीछे की असंगति है । युद्ध भी तो उसका धर्म था, जिसको अर्जुन छोड़ रहा था ।

प्रभुदत्त शास्त्री जी ने उत्तर दिया– गीता में दो शब्द बार–बार आये हैं– सन्यास और त्याग । संन्यास का अर्थ है– सभी कर्मों को कहीं रख देना । 'न्यास' धरोहर का नाम है, छोड़ने का नहीं, तो वह न्यास 'सं' अच्छे प्रकार से हो, जिसमें कोई खतरा न हो, ऐसा

धरोहरधारी तो ईश्वर ही हो सकता है , अत: उसमें रखे हुए कर्मों को ही संन्यास कहा जाता है । वहाँ भी धर्म कर्मों का त्याग भगवान श्रीकृष्ण को इष्ट नहीं है ।

त्याग का तात्पर्य केवल कर्म फल का त्याग इष्ट हो, कर्म का त्याग नहीं । इस तरह का त्याग त्यज् धातु से प्रकट होता है, वह न्यास धातु के पद से नहीं, अत: जिस युद्ध का त्याग अब तक नहीं चाहा, वह युद्ध त्याग यहाँ नहीं है, यहाँ तो युद्ध फल त्याग के लिए 'परित्यज्य' बोला गया है, अत: युद्ध का फल छोड़ और शरण में आकर युद्ध कर , यही कहा जा रहा है ।

इस अर्थ विवेचना पर विद्वानों ने उन्हें स्वर्ण पदक से सम्मानित कर गीता प्रेमी बना दिया । उन्होंने श्रीमद्भगवतगीता पर नवीन टीका की रचना की ।

इसी प्रकार पटना के अखिल भारतीय संस्कृत साहित्य सम्मेलन में एक अपूर्ण संस्कृत काव्य की पद पूर्ति करने पर शास्त्री जी को सर्वोच्च पदक प्राप्त हुआ । इसके अतिरिक्त अन्यान्य बहुत से सम्मेलनों में स्स्कृत कवियों की श्रेणी में मुख्य बनकर स्वरचित रचनाएँ सुनायी और विद्वानों से सत्कार पाया ।

प्रभुदत्त शास्त्री केवल साहित्यकार ही नहीं थे, वरन् आयुर्वेद के ज्ञाता भी थे । गणपति सम्भवम् में वर्णित एक पंक्ति **"चूष्यं चेन्मृदु जम्बु नामक फलं कुक्षिस्थ रोगापहम्"** अर्थात् जामुन पेट के रोगों को दूर करती है, आयुर्वेदज्ञ होने का प्रमाण देती है । वैद्य कवि सम्मेलन में आयोजित 'वैद्य विद्येव विद्या यत्र वैद्य विद्येव प्रशंसिताऽभूत नान्या विद्या तत्र:' में भी वैद्यज्ञ होने का परिचय दिया है । उनका देहान्त 11 दिसम्बर 1972 ई. को हुआ ।

विद्यावाचस्पति की उपाधि से विभूषित कवि प्रभुदत्त शास्त्री ने विविध ग्रंथों की रचनाएं की है-

1. श्रीमद् भगवद् गीता का व्यंग्य मन्दाकिनी नाम का भाष्य- (षडध्यायात्मक) जिसमें 'च', चैव, चाप, चाद्य आदि शब्दों को पाद पूरकता दोष से पाण्डित्य के साथ बचाया गया है । 'निर्द्वन्दोऽहिमहाबाहो" का 'हि' शब्द देखते ही समस्त 'ही' शब्द हीरों के हार की तरह चमक उठते हैं और 'स्वभावस्तु' प्रवर्तते' आदि चरणों में आये हुए 'तु' शब्द तुरंग की तरह नाच उठते हैं । अन्य पदों के सुन्दर-सुन्दर व्यंग्य भगवद् रूप में सम्मानित किये गये हैं ।
2. विराट रूप दर्शन-गीता के एकादश अध्याय से गृहीत इस टीका में भगवान श्रीकृष्ण के विराट स्वरूप दर्शन का वर्णन है ।
3. धन्वन्तरि जन्मामृतम्-धन्वन्तरि के अपूर्व अर्थ, अन्यान्य रत्नों की अनुपयोगिता, धन्वन्तरि का वासन्तिक रूप आदि और नैरूज्य चाहने वालों के पाठ के लायक अत्यंत संग्राह्य ।
4. नान्दी श्राद्धामृत और चरखावन्दनामृत राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी के इष्टदेव चर्खा और राम की महिमा बताने वाला सानुवाद संस्कृत काव्य और उनकी होने वाली शताब्दी में नान्दी श्राद्ध के रूप में यह ग्रन्थ है ।
5. संस्कृत वाग्विजय नाटक- जो संस्कृत भाषा के प्रचार को वस्तुत: हृदय से चाहते हैं उनके मंच पर खेलने लायक पाँच अंकों वाला नाटक जिसे पांच दिन तक भी खेला जा सकता है और एक दिन में भी । जिसमें सभी भाषाओं का ज्ञान देते हुए संस्कृत भाषा के मस्तक पर सरस्वती के हाँथों से राज्य तिलक किया गया है ।
6. संस्कृत वाक् सौन्दर्यामृतम् जिस संस्कृत भाषा के परमाणु से पर्वत तक और हिमालय से कन्याकुमारी तक के पदार्थों का वर्णन किया है, उसके स्वयं के वर्णन और उसके विसर्ग अनुस्वार, वचन लिंग और सरलता से शिक्षण सम्बन्धी ज्ञान पर ऐसा सुन्दर काव्य कोई न था, इस त्रुटि को इस काव्य ने दूर किया है ।
7. 'राष्ट्रध्वजामृतम्' राष्ट्रीयपरक ग्रंथ है ।
8. झाँसीश्वरी शौर्यामृतम् स्वतंत्र शासन की सत्ता की रक्षा के लिए सबसे पहले सन् सत्तावन में शहीद होने वाली झाँसी की रानी की बहादुरी का मूर्तिमान स्वरूप प्रस्तुत है ।
9. महिम्न स्त्रोत-जो विष्णु और शिव दोनों का आराधक है ।
10. महालक्ष्मी पूजन-दीपावली के दिवस पर महालक्ष्मी पूजन का वर्णन इस ग्रंथ में है ।

कवि प्रभुदत्त शास्त्री द्वारा रचित 'गणपति सम्भवम्' महाकाव्य भक्तिपरक है । इस ग्रंथ का प्रकाशन गणतंत्र दिवस के दिन 26 जनवरी 1968 ई. में हुआ । यह ग्रंथ गणपति देव के शासन तंत्र की शिक्षा देता है, यही कारण है कि इसका प्रकाशन कवि ने गणतंत्र दिवस पर किया । गणपति सम्भवम् पुराण आदि ग्रंथों में आंशिक रूप से समुपलब्ध गणेश की कथा का कवि ने स्व कल्पना द्वारा परिवर्धन व परिवर्तन कर एक नवीन रूप में पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया है । महाकवि कालिदास रचित "कुमार संभवम्" महाकाव्य की परम्परा में लिखा गया यह महाकाव्य दस सर्गों में निबद्ध है । किन्तु दशम् सर्ग में कवि वंश का परिचय है । इसमें देव गणेश जी की शैशवावस्था से गणपतित्व पद की प्राप्ति तक की कथा सन्निहित है । पद-पद में वर्तमान राष्ट्रीय चेतना समुद्भावित है । वस्तु, नेता, रस का युगानुरूप वर्णन कवि की काव्यशास्त्रीय प्रतिभा को व्यक्त करती है । इस महाकाव्य का वस्तु विन्यास काव्यशास्त्र रीति से महाकव्योचित है । काव्यात्मभूत ध्वनि-रस-रीति-गुण-अलंकार-बिम्ब विधान आदि की उत्तम योजना महाकाव्य के नामकरण से अंतिम पद्य तक दिखायी देती है । मातृभूमि रंक्षण में शिरश्छेद होने पर भी प्रयोजन सिद्धि रूप में सफल प्रशासकादर्श यहाँ प्रतिबिम्बित है । यह महाकाव्य अभिधा से गणेश की दिव्य उत्पत्ति कथा का वर्णन करता है । लक्षणा से देश के वर्तमान स्वातन्त्र्य प्रशासन का लक्षित करता है और व्यञ्जना से सहृदयहृदयाहलाद् के साथ आदर्श राष्ट्र रक्षक की, उसकी प्रशासन चारूता को प्रकट करता है । कवि का उत्तम आध्यात्मिक चिन्तन और राष्ट्र प्रेम उसके परम आराध्य गणेश के साथ समरसता को प्राप्त करता है । काव्य नायक गणेश एक आदर्श लोक नायक भूमिका के रूप में चित्रित है । विघ्नों का नाश करने वाले, ज्ञान, विवेक और यश-कीर्ति के देव एवं माता पार्वती के मानस पुत्र गणपति देव का माहात्म्य आज भी विद्यमान है । इस महाकाव्य में गणेश क कुशल योद्धा, धर्मवीर होने के साथ-साथ मातृ भक्त के रूप में भी समक्ष आये हैं । उनकी मातृभक्ति की पराकाष्ठा वहाँ परिलक्षित होती है, जब भगवान शिव उनके सिर पर अवच्छेदन कर देते हैं ।

इस महाकाव्य के सभी पात्र दिव्य है । उनके विविध प्रतीकात्मक रूप भी है । यथा-शिव (धवलित:), पार्वती(पीतवर्णा:) , गणेश (रक्तवर्णा:)। ये तीन पात्र होते हुए भी पूर्व ब्रह्म त्रयगुण भूत है । द्वितीय रूप है- पार्वती (भारतमाता), गणेश(राष्ट्र रक्षा में शिरच्छेदन होने पर भी एक जीवित आदर्श गणपति), शंकर(राष्ट्र भक्त के कठोर परीक्षक), । पार्वती और शंकर अवाङ्मनसगोचर है, इनकी क्रीड़ा लीलामात्र है । मनमें योग और बाहर गृहस्थ के समान कार्य दिखाई देते हैं । गणपति सम्भवम् के पात्रों के उद्घोष में भारत राष्ट्र का जयघोष सुनायी देता है, उनकी शक्ति में भारतीय योग का रूप दिखाई देता है, उनके गान में भारत का राष्ट्र गीत गाया जाता है, उनके स्वरूप में भारतीय जनता का आदर्श रूप दृष्टिगोचर होता है, उनके कार्यों में देवों की अलौकिकता विद्यमान है । इस महाकाव्य में हिमालिय से कन्याकुमारी तक भारत की वीर भोग्या वसुन्धरा परिलक्षित होती है । पात्र चित्रण में अध्यात्म शास्त्र और राष्ट्र अनुराग का अद्भुत समन्वय है ।

चरित नायक गणेश के सात रूप प्राप्त होते हैं- बालक, गजानन, गणपति, एकदन्त, लेखक(महाभारतस्य), मोदक प्रिय(पर्यटक:), आदर्श प्रशासक । पद-पद में गणेश जी के चित्रण में राष्ट्र भक्ति का दर्शन होता है ।

प्रथम सर्ग में 'हिमगिरि परिचय' नाम से भूषित प्रथम सर्ग में कवि ने हिमालय के शोभनीय दृश्य का वर्णन किया है। श्वेत पगड़ीधारी भारतीय वयोवृद्ध में अग्रणी हिमालय की श्वेतिमा की प्राकृतिक छटा का उत्प्रेक्षात्मक चित्रण तथा हिमालय के वक्षस्थल स्वरूप कश्मीर की सुषमा एवं मस्तक स्वरूप नेपाल का वर्णन अतीव रमणीय है । काश्मीर में स्थित मटन, पहलगाँव, अमरनाथ गुहा तथा नेपाल में अवस्थित पशुपतिनाथ, वराह मन्दिर, रूद्राक्ष वृक्ष, बाघमती नदी, गोरखनाथ यतिराज के मन्दिर व शिवरात्रि पर्व का वर्णन है । इसके अतिरिक्त जगन्नाथ पुरी, केदार नाथ, बदरीनाथ आदि का उल्लेख है।

द्वितीय सर्ग में "गिरिश गिरिजा पाणिग्रहण" नामक इस द्वितीय सर्ग में भगवान शिव व पार्वती के विवाह का यथार्थ चित्रण किया गया है । सर्वप्रथम हिमालय के द्विविध जङ्गम व स्थावर रूप का वर्णन इस सर्ग में मिलता है । इसमें पहला रूप पर्वतों का प्रतिनिधि बनकर स्वर्ग की 'सुधर्मा' नामक देवसभा में सदस्यता करता है तथा जिसमें देवताओं के समान प्रकट व अंतर्ध्यान होने की शक्ति है । दूसरा रूप श्रीकृष्ण के विभूति समूह में गणनीय है, जिसे सर्वप्रथम अर्जुन ने सुना । तत्पश्चात् हिमालय द्वारा उमा का पत्नी रूप में ग्रहण, मैनाक व पार्वती के जन्म की कथा का वर्णन है । पार्वती की बाल मनोविनोद लीला, अद्वितीय सौंदर्य तथा भगवान शिव का

पति रूप के प्राप्त करने के लिए व्रत तथा कठोर तपस्या का कवि ने अंकन किया है । मनोवाञ्छित वरदान प्राप्त होने पर शिव व पार्वती के ब्राह्म विवाह का वर्णन है । कवि ने इसमें भारतीय संस्कृति के विवाह के अनुरूप वरयात्रा, कन्यादान, पाणिग्रहण, अश्मारोहण विदि, लाजा होम, अग्नि परिक्रमा, ग्रन्थि बंधन, सप्तपदी विधान, सीमान्त सिन्दूर तथा विदाई आदि भारतीय वैवाहिक संस्कारों, रीति रिवाजों का कवि ने प्रतिपादन किया है ।

तृतीय सर्ग में 'गौरी योग शक्ति चमत्कृति नाम' नामक यह तृतीय सर्ग है । इस सर्ग में भगवान शिव व पार्वती का कैलाश विहार, कैलास पद की निरूक्ति (शिव-शक्ति की केलियों का समूह ही भोग और योग दोनों रूपों में विचित्रता से होता है) कैलाश पर ऋतुराज बसन्त सहित षड् ऋतुओं की उपस्थित, उसकी मनोहारी छटा का वर्णन किया गया है । इस सर्ग में भगवान शिव के योगाराधन के साथ पार्वती के योग की शक्ति मिट्टी के पुत्र व मूषक पर फलित करके दिखाई गयी है । तत्पश्चात् शक्तिरूपा पार्वती द्वारा पुत्र को रक्षा कार्य के लिए द्वार पर नियुक्त एवं शिव गणों द्वारा पार्वती की महिमा, स्तुति अतीव भक्ति भावना से ओतप्रोत है ।

चतुर्थ सर्ग में 'शास्त्रार्थ शस्त्रीभाव' नामक सर्ग में भगवान शिव और पुत्र गणेश का परस्पर शास्त्रार्थ और तदुपरान्त शस्त्र रूप हो जाना आश्चर्यमयी कला है। जब भगवान शिव समाधि पूर्ण करके पार्वती से मिलने के लिए आते हैं, तब द्वार पर नियुक्त अलौकिक बालक द्वारा प्रविष्ट होने से मना किये जाने व तिरस्कृत किये जाने पर भगवान शिव ने उनकी शास्त्रचपलता, हठपन को देखकर सिर का अवच्छेदन कर दिया । देवगणों द्वारा प्रार्थना किये जाने पर शांत मन से शोकग्रस्त पार्वती में पुनज्जीवित करने की सामर्थ्य होते हुए भी भगवान शिव से पुत्र को सप्राण करने के लिए कहा । अंत में शम्भू और शंकर नामक दोनों धातुओं से शांत होने से बालक के दैहिक तेज का चंद्रमा में समाहित होना, चन्द्रमा की अदर्शनीयता तथा 'पत्थर चौथ' नामकरण इत्यादि का विवेचन है ।
पंचम सर्ग में गजमनुजयोजन नामक पंचम सर्ग में पार्वती द्वारा धिक्कारने पर भगवान शिव द्वारा पुत्र पर गज के सिर का प्रत्यारोपण, गणेश की बाल क्रीडा, विद्याध्ययन तथा ओउम् तत्व का ज्ञाता, वेद, संगीत, नृत्य, व्याकरण में पारंगत श्रीगणेश का वर्णन है । समस्त शिवगणों द्वारा गणाधिपत्य की पदवी एवं कवि द्वारा सर्वतोभद्रचक्र की कल्पना, गज-पूजन का महत्व तथा शिव-शिवा की महिमा प्रतिपादित है । इसके अतिरिक्त काशी के पण्डितों की प्रशंसा की गई है ।

षष्ठ सर्ग में 'तान्तैकदन्त प्रसंग' नामक इस सर्ग में सर्वप्रथम कवि ने श्री गणेश के कुण्डल व दांतों की शोभा का वर्णन करते हुए अनन्य भक्ति भावना अभिव्यक्त की है । तत्पश्चात् गुरु शिव के पास परशुराम को मना करने पर गणेश व परशुराम में परस्पर विवाद तथा परशुराम के फरसे के प्रहार से गणेश जी के दंत का भग्न होना, देवगणों द्वारा भग्न दंत की स्तुति, पार्वती जी के क्रोध पर भगवान विष्णु द्वारा सान्त्वना तथा गणेश के दंत कथा की महिमा का वर्णन इस सर्ग में निहित है । परशुराम भी भगवान शिव से क्षमा माँगते हुए परशु का त्याग कर उनकी शरण में जाते हैं ।

सप्तम सर्ग में 'महाभारतलेखाख्यान नाम' नामक सप्तम सर्ग में महर्षि कृष्ण द्वैपायन वेदव्यास द्वारा श्री गणेश को महाभारत लेखन कार्य का अध्यक्ष नियुक्त किये जाने पर श्रीगणेश द्वारा लेखन कार्य पूर्ण का वर्णन है । आठ हजार आठ सौ श्लोकों से युक्त यह महाभारत ज्ञान, धर्म, कर्म तथा पंचम वेद स्वरूप है । अंत में शांति-शांति का उच्चारण कर महर्षि वेदव्यास द्वारा 'विघ्नेश' पदवी को गणपति देव ने धारण किया । समापना समारोह के अवसर पर गणेश पर पुष्पवर्षा, आरती एवं गज पर आरूढ़ कर श्रीगणेश की विदाई का वर्णन है ।

अष्टम सर्ग में 'देवमोदकोपहारग्रहोनाम' नामक इस सर्ग में गणेश की बाल मनोविनोद क्रीड़ा, माता-पिता की परिक्रमा, गणेश के जन्म दिवस पर देवताओं द्वारा मोदकं का उपहरा आदि का विवेचन है ।

नवम् सर्ग में गणेशासनोत्कर्ष नामक इस सर्ग में गणशासन के लक्षण , विधि, स्थिरता, के उपाय आदि का विशद विवेचन, आज के राजनीति विशारदों के देखने योग्य है । मंत्र, यंत्र, तंत्रों के वश में चलने वाले गणेश देव का गणतंत्र शासन सौभाग्य की उन्नति, दुर्भाग्य का नाश करने वाला, दारिद्रयता को दूर करने वाला, अन्न उत्पन्न करने वाला, निर्धनों को वस्त्र प्रदान करने वाला है । विभिन्न विद्याओं का अभिनन्दन करने वाला, स्थानच्यूत का शरणदाता, उन्नतिशील, रक्षक, ब्रह्मचर्य का रक्षक, सूक्ष्म दृष्टि युक्त, बहुपितृत्व एवं पत्नी बाहुल्य में दोष, धर्मनिरपेक्षता, स्त्री-पुरुषों का समानाधिकार, परिवार नियोजन, गणशासन के नियम तथा लक्षण बतलाते हुए

कथानक को सामयिक संदर्भों से जोड़ा है । रचनाकार ने तात्कालिक प्रेतों के माध्यम से वर्तमान शासन के सत्ताधीशों , अधिकारियों, व उनके आश्रित रहने वाले तत्वों का यथार्थ चित्रण किया है । गणेश के सुमुखादि, रणपादि नामों का स्मरण , मातृभूमि वन्दन, शहीदों को श्रद्धान्जलि तथा काव्य रूप पुष्प का गणपति को समर्पण इत्यादि इस सर्ग के विवेच्य विषय है ।

दशम् सर्ग में 'काव्यान्तर पुष्पार्पण' नामक सर्ग में कवि ने आत्म परिचय तथा स्वरचित विविध ग्रन्थों का संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत किया है ।

सन्दर्भ – ग्रन्थ सूची

1. संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र- प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्रा, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी 2010
2. संस्कृत – साहित्य का इतिहास – डॉ. कपिलदेव द्विवेदी रामनारायण विजयव लाल 2009
3. W.M. डिक्शन इंग्लिश एपिक पोइट्री एण्ड हिरोइक पोइट्री पृष्ठ – 27
4. डॉ. हजारी प्रसाद द्विवेदी संस्कृत महाकाव्यों की परम्परा आलोचना अक्टूबर – 1951
5. डॉ. शम्भूनाथ सिंह हिन्दी महाकाव्य का स्वरूप विधान
6. साहित्य दर्पण- आचार्य विश्वनाथ कृत परिच्छेद 6
7. गणपति सम्भवम् – आचार्य प्रभुदत्त शास्त्री, अर्चना प्रकाशन- रामदास पेठ नागपुर